2

साहित्य दर्पण (द्वितीय परिच्छेद)

तिस्रः शब्दस्य शक्तयः

ध्वनिवादी काव्याचार्यों की भाँति विश्वनाथ कविराज ने भी शब्द की तीन शक्ति स्वरूप-निरूपण किया है। शब्द की ये तीन शक्तियों, उसकी तीन उपाधियों जिन्हें 'अभिधा', 'लक्षणा' और 'व्यञ्जना' के रूप में पहचाना जा सकता है जिनके कारण शब्द 'वाचक', 'लाक्षणिक' और 'व्यजंक' रूप प्रतीत हुआ करता है–

'अभिघादित्रयोपाधिवैशिष्टयात् त्रिविधो मतः।
शब्दोऽपि वाचकस्तद्वल्लक्षको व्यञ्जकश्तथा॥' (सा. द. 2.1)

विश्वनाथ कविराज ने 'अभिधा' शक्ति को 'वाच्य-अर्थ की बोधिका' अग्रिमा शां कहा है। **(वाच्योऽर्थोऽभिधया बोध्यः, अग्रिभाऽभिधा**—साहित्यदर्पण 2.3, 4 काव्यप्रकाशकार भी 'अभिघा' को शब्द का 'मुख्य व्यापार' कह चुके हैं। दो में कोई वास्तविक भेद नहीं है। जो कुछ भी थोड़ा भेद है वह अभिधा के प्रतिपाद प्रकार में है। काव्यप्रकाशकार ने 'संकेतग्रह' के उपायों में केवल 'वृद्धव्यवहार' का उल्लेख किया है जो कि अभिहितान्वय और अन्विताभिवान–दोनों वादों में सम रूप से मान्य है। किन्तु विश्वनाथ कविराज ने 'वृद्धव्यवहार' के अतिरिक्त 'आप्तोपदेश और 'प्रसिद्धार्थपदसमभिव्याहार' को भी 'शक्तिग्रह' के उपाय रूप से प्रतिपादित किया है। यहाँ विश्वनाथ कविराज की दृष्टि वही है जो 'शक्तिग्रह' के उपाय-प्रतिपाद निम्नलिखित श्लोक-वाक्य में दिखायी देती है–

'शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोषाप्तवाक्याद् व्यवहारतश्च।
वाक्यस्य शेषाद् विवृतेर्वदन्ति सान्निध्यतः सिद्धपदस्य वृद्धाः॥'

काव्यप्रकाशकार ने उपाधि-शक्तिवाद के साथ-साथ जाति-शक्तिवाद, जाति-विशि व्यक्तिशक्तिवाद और साथ ही साथ अपोहशक्तिवाद का भी निर्देश कर दिया है जिससे काव्यशास्त्र के पाठक, शब्दों के अर्थ के सम्बन्ध में, इन विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं से परिचित रहें। किन्तु विश्वनाथ कविराज केवल उपाधि-शक्तियों का निरूपण करते हैं जो कि अलद्वार शास्त्र के लिये विशेष रूप से उपयुक्त है।

वाक्य स्वरूपं–

वाक्यं स्याधोग्यता काङ्क्षासक्तियुक्तः पदोच्चयः।

"वाक्यं रसात्मकं काव्यं" काव्य लक्षण में वाक्य स्वरूपं को स्पष्ट किया गया है–

अर्थ–योग्यता, आकांक्षा और आसक्ति से युक्त पदसमूह को वाक्य कहते हैं।

व्याख्या–पदार्थों के परस्पर सम्बन्ध में बाधा न होने को 'योग्यता कहा जाता है। योग्यता के न होने पर भी पदसमूह को यदि वाक्य माना जाए तो "वहिनना सिञ्चति" अर्थात् आग से संचन करता है इत्यादि प्रयोग भी वाक्य होगा। सेचन क्रिया में 'आग' (वहिन) की कारणता न होने से (योग्यता न होने से) यह वाक्य नहीं होगा।

आकांक्षा–ज्ञान की समाप्ति के अभाव को 'आकांक्षा' कहा जाता है। यह श्रोता की जिज्ञासा (इच्छा शक्ति) पर आधारित है। आकांक्षा से रहित पदसमूह को वाक्य माना जाय तो गौरश्वः पुरुषों हस्ती गाय, घोड़ा, पुरुष, हाथी इत्यादि पदसमूह भी वाक्य हो जाएगा। आकांक्षा के न रहने से यह वाक्य नहीं है। बुद्धि का विच्छेद अर्थात् व्यवधान न होने को आसक्ति कहते हैं। बुद्धिविच्छेद होने पर भी पदसमूह को वाक्य माना जाय तो इस समय में उच्चारण किए गए "देवदत्तः" शब्द का दूसरे दिन में उच्चारण किए गए 'गच्छति' जाता है। इस पद के साथ सगति होगी, अतः बुद्धि विच्छेद के होने से यह वाक्य नहीं है। यहाँ पर आकांक्षा आत्मा का धर्म है और योग्यता पदार्थ का धर्म है फिर भी परस्पर सम्बन्ध से ये पदसमूह के भी धर्म माने गये हैं।

"इत्थं वाक्यं द्विधामतम्" ॥1॥

इस प्रकार योग्यता आकांक्षा और आसक्ति से युक्त वाक्य समूह को 'महावाक्य' कहते हैं। इस प्रकार वाक्य के दो भेद होते हैं—'वाक्य और महावाक्य'।

कहा भी गया है—कि अपने-अपने अर्थ का बेधन कर समाप्त हुए वाक्यों का अङ्गाङ्गिभाव सम्बन्ध से फिर मिलकर एक वाक्यता (महाकाव्यता) हो जाती है। उनमें वाक्य जैसे—'शून्यं वासगृहम्' इत्यादि। महावाक्य जैस— रामायण, महाभारत और रघुवंश आदि। इस प्रकार पद समूह को वाक्य कहा गया है।

पदलक्षण—वर्णाः पदंप्रयोगार्हानन्वितैः कार्यबोधकाः। अर्थात्—प्रयोग के योग्य अनन्वित, एक अर्थ के बोधक वर्णों को "पद" कहा जाता है।

व्याख्या—जैसे 'घटः' यह पद का उदाहरण है। "प्रयोगाऽर्ह" कहने से प्रतिपदिक और भू वा प्रभृति धातुओं की व्यावृत्ति होती है प्रयोगार्ह अर्थात अपद होने से प्रयोग योग्य नहीं होते हैं। 'अनन्वितं से तात्पर्य वाक्य और महावाक्य की व्यावृत्ति होती है क्योंकि ये अन्वित हैं "एक" कहने से साकांक्षा अनेक पद और अनेक वाक्यों की व्यावृत्ति होती है। अर्थबोधक कहने से "कचटतप' इत्यादि वर्णों की आकृति होती है। 'वर्णाः' यहाँ पर बहुवचन नहीं है क्योंकि एक वर्ण वाले और दो वर्ण वाले भी पद होते हैं।

"अर्थो वाच्यश्च लक्ष्यश्च व्यङ्ग्यश्चेति त्रिधा मतः ॥2॥

अर्थात वाच्य लक्ष्य और व्यंग्य इस प्रकार अर्थ के तीन भेद होते हैं।

वाच्योऽर्थोऽभिधया बोध्यो लक्ष्यो लक्षणया मतः।
व्यङ्ग्यो व्यञ्जनया ताः स्युस्तिरजः शब्दस्य। शक्तयः ॥3॥

प्रस्तुतः पंक्ति में अर्थ का लक्षण बताया गया है—

व्याख्या—अभिधा से वाच्य अर्थ का लक्षणा से लक्ष्य अर्थ का व्यञ्जना से व्यङ्ग्य अर्थ का बोध होता है। इस प्रकार शब्द की तीन शक्तियाँ होती हैं। उनमें संकेतित (मुख्य) अर्थ का बोध करने से पहली वृत्ति को 'अभिधा' कहते हैं।

विश्वनाथ कविराज ने अभिधाशक्ति को 'वाच्य अर्थ' की बोधिका कहा है यथा—

'वाच्योऽर्थोऽभिधया बोध्यः अग्रिमाऽभिधा', संङ्केतो गृहयते जातौ गुणद्रव्यक्रियासु च ॥4॥

विश्वनाथ कविराज ने भी 'वृद्ध व्यवहार एवं आप्तोपदेश से भी अभिधा को प्रतिपादित किया है।

वृद्ध व्यवहार में उत्तम वृद्ध के मध्यम वृद्ध के उद्देश्य करके "गाय लाओ" ऐसा कहने पर मध्यम वृद्ध को गाय लाने के लिए तत्पर अनुमान कर बालक इस वाक्य का गलकम्बल आदि से युक्त पिण्ड को लाना अर्थ है ऐसा पहले समझ लेता है। पीछे 'गाय को बाँधों', 'घोड़े को लाओ' इत्यादि वाक्य में गो शब्द का गलकम्बल वाला पिण्ड अर्थ है और आनय पद का लाना अर्थ है ऐसे संकेत (शक्ति) को निश्चय करता है। इस प्रकार व्यवहार से शक्तिग्रह का यह उदाहरण है:-

कहीं पर प्रसिद्ध अर्थ वाले पद के समीप उच्चारण से शक्तिग्रह होता है। जैसे—"इस विकसित कमल के बीच में बैठकर मधुकर शहद पी रहा है।" यहाँ पर प्रसिद्धार्थ पद कमल के समीपोच्चारण से मधुकर पद का भ्रमर में शक्ति ग्रह होता है। कहीं पर आप्त के उपदेश से शक्तिग्रह होता है। जैसे—आप्त के उपदेश से घोड़े में अश्व शब्द का शक्तिग्रह हुआ है उस संकेतित (मुख्य) अर्थ का बोध कराने वाली, शब्द का किसी दूसरी शक्ति से व्यवधान शून्य शक्ति को 'अभिधा' कहते हैं। जाति, गुण, द्रव्य और क्रिया में संकेत (शक्ति) का ग्रहण किया जाता है।

व्याख्या—शब्द चार प्रकार के होते हैं—जातिवाचक, गुणवाचक, द्रव्यवाचक और क्रियावाचक।

'गौ' आदि व्यक्ति में रहने वाले गोत्व आदि धर्म को 'जाति' कहते हैं। विशेष अर्थ के आधान के हेतुभूत सिद्ध वस्तु धर्म को 'गुण' कहते हैं। जैसे कि शुक्ल आदि गुण गौ आदि व्यक्ति को सजातीय कृष्ण आदि से अलग करते हैं। अतः शुक्ल, नील आदि वस्तु के सिद्ध धर्म गुण है। एक व्यक्ति के वाचक हरि हर आदि द्रव्यशब्द है। इनसे एक ही व्यक्ति का बोध होता है। साध्य रूप पाक आदि वस्तु धर्मों को 'क्रिया' कहते हैं। इन साध्य रूप वस्तु धर्मों में चूल्हे पर चढ़ाना, पीछे उतारना इत्यादि पहले और दूसरे सम्पूर्ण क्रिया समूह को "पाक" आदि शब्द से कहते हैं। व्यक्ति की इन चार उपाधियों में संकेत (शक्ति) का ग्रहण होता है न कि व्यक्ति में। विश्वनाथ कविराज ने केवल उपाधि शक्तिवाद का निरूपण किया है। जो कि अलंकार शास्त्र के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है।